International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 23-09-2026, Accepted: 23-10-2026, Published: 07-11-2026
Volume 12, Issue 4, 2026, Page No. 68-71

महादेवी वर्मा के निबंधों में भारतीय संस्कृति के स्वर

अतुल मुदगल
Department of Hindi, University of Rajasthan, Jaipur, Rajasthan, India
DOI: https://doi.org/10.66856/ijhr.2026.12.4.12261

सारांश
इतिहास साक्षी है कि प्रत्येक युग में लोकोत्तर क्षमतावान नेता, कवि, कलाकार, कवयित्री समय के शिलाखंड पर अपने महान व्यक्तित्व की अमिट छाप छोड़ जाते हैं। हिंदी साहित्य जगत में महादेवी वर्मा विख्यात कवयित्री हैं जिन्हें हम 'आधुनिक मीरा' के रूप में पहचानते हैं। छायावाद और रहस्यवाद की प्रमुख कवयित्री जो भाव जगत में 'पीड़ा की रानी' और 'नीर भरी दुख की बदली' कहलाती हैं, कवि के रूप में जो महादेवी अंतर्मुखी हैं वही गद्य क्षेत्र में बहिर्मुखी हो गई हैं। महादेवी जी ने जो कुछ भी अपनी कविताओं में नहीं कहा या जो कविता का विषय नहीं हो सका, उस सब को पूरी ईमानदारी के साथ गद्य में रूपायित किया है। प्रशंसनीय बात यह है, कि इन्होंने गद्य की नवीन विधाओं (संस्मरण, रेखाचित्र, संभाषण और निबंध) में प्रस्तुत किया है। इन विधाओं के माध्यम से दलित वर्ग का मनोविज्ञान, नारी का मनोविज्ञान, संस्कृति का मनोविज्ञान तथा जीव मनोविज्ञान स्पष्ट हुआ है। वे काव्य में जितनी कल्पनाशील है गद्य लेखन में उतनी ही यथार्थवादी।
महादेवी जी ने जीवन की वास्तविकता से परिचित होते ही निबंध लिखना प्रारंभ कर दिया था। उन्होंने अधिकांशतः विचारात्मक निबंध ही लिखे हैं, जिनमें कुछ संस्मरणात्मक, आलोचनात्मक, नारी समस्या मूलक और कुछ अन्य विषयों पर हैं। जिनमें उनकी दृष्टि गहन चिंतन एवं मनन से परिपूर्ण विचारों की अभिव्यक्ति की ओर अधिक रही है। महादेवी जी के निबंधों के विषय प्रायः सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक अथवा भावनात्मक रहे हैं। उनके निबंध 'शृंखला की कड़ियां', 'क्षणदा', 'संकल्पिता', 'साहित्यकार की आस्था और अन्य निबंध' आदि संग्रहों में संग्रहित हैं। भारतीय संस्कृति से संबंधित विचारात्मक और चिंतन प्रधान निबंध बाद में 'भारतीय संस्कृति के स्वर' पुस्तक में संग्रहित किए गए हैं। यहाँ इस पुस्तक में संग्रहित निबंधों में निहित भारतीय संस्कृति के विविध आयामों पर चिंतन किया गया है। जिनमें मातृभूमि, संस्कृति, भारतीय संस्कृति, मानव की विकास परंपरा, प्राकृतिक परिवेश, शासन, भाषा, शिक्षा, नारी और संस्कार हैं, जो कि भारतीय संस्कृति के स्वरों को समझने में एक मूल कड़ी का काम करते हैं। महादेवी जी के इस चिंतनशील गद्य से हमें उनके व्यक्तित्व का गंभीर वैचारिक आयाम मिलता है। जहां एक ओर महादेवी जी को रहस्यवाद और करुणा–वेदना की मूर्ति कहा जाता है वहीं उनका गद्य हमें ऐसे खरे भारतबोध के दर्शन कराता है, जिसमें अपनी जड़ों से जुड़े रहने की प्रार्थना है, आधुनिकता की दौड़ में अंधे होने पर प्रश्नचिन्ह हैं और साथ ही एक संतुलित भविष्य दृष्टि भी है। ऐसे बहुआयामी पाठ को पढ़कर पाठक महादेवी जी को आधुनिक विदुषी कहने से नहीं चूकता।

मूल शब्दः महादेवी वर्मा, भारतीय संस्कृति, राष्ट्रबोध, मातृभूमि, शासन, मानव–विकास, परंपरा, प्राकृतिक परिवेश, भाषा, शिक्षा, सभ्यता, भारतबोध

"यदि गद्य कवियों की कसौटी है तो निबंध गद्य की कसौटी है।" आचार्य शुक्ल का यह कथन महादेवी जी पर पूर्णतया चरितार्थ होता है। एक सफल कवयित्री होने के साथ महादेवी जी उच्च कोटि की निबंध लेखिका भी हैं। यदि निबंध गद्य की विशिष्ट विधा है तो रेखाचित्र निबंध की विशिष्ट विधा है। महादेवी जी के निबंधों में भाव और विचार का अद्भुत सामंजस्य है। महादेवी जी लिखती हैं "विचार के चरणों में मुझे गद्य लिखना ही अधिक अच्छा लगता है अपनी अनुभूति ही नहीं बाह्य परिस्थितियों के विश्लेषण के लिए भी इसमें पर्याप्त अवकाश रहता है।"
व्यक्तित्व की स्पष्ट तरल–सरल गहन गंभीर रेखाओं, विविध आयामों से ही किसी कृतिका के कृतित्व का निर्माण हुआ करता है। महादेवी जी का समूचा अंतरंग एवं बहिरंग व्यक्तित्व ही वास्तव में उनके समग्र कृतित्व की रेखाओं में रंग–रूप में आबद्ध हो गया है। महादेवी जी का जन्म फर्रुखाबाद (उत्तर प्रदेश) के एक प्रतिष्ठित परिवार में सन 1907 ई. में होली के दिन हुआ था। उनके पिता श्री गोविंद प्रसाद विद्वान, शालीन तथा हंसमुख थे। वे इंदौर के डेली कॉलेज में अध्यापन करते थे। इनकी माता हेमरानी देवी का अधिकांश समय पूजा–पाठ, व्रत–नियम आदि में बीतता था पिता नास्तिक थे, माता आस्थावान। महादेवी का जीवन एक मौन एवं सच्ची साधिका का जीवन है। ऐसा लगता है जैसे उन्होंने नारी–दर्द को पिया और उगला है। वैवाहिक जीवन को अपने लिए उपयुक्त ना समझने के कारण एक विशेष प्रकार का आक्रोश उभर कर आया है। यह आक्रोश उनके व्यक्तित्व में तो नहीं था किंतु कृतियों में है। पूर्ण समर्पित जीवन जीने वाली इस कवयित्री ने अपने गद्य में समाज का कोना–कोना छान लिया है। संवेदना, संदेश, उपदेश, आदेश, प्रेरणा, उत्साह, ज्ञानगरिमा से मंडित उनके निबंधों में उनका व्यक्तित्व झलकता है। छायावादी काव्य–धारा के चार (प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी) आधार स्तंभ माने गए हैं, उनमें से महादेवी अकेली महिला होने पर भी एक सबल–सुदृढ़ एवं सर्वाधिक ऊर्जस्वित स्तंभ हैं। काव्य के क्षेत्र में मूलतः भावना, प्रेम और करुणा की गायिका होने के कारण उन्हें "आधुनिक मीरा" भी कहा गया है। जो करुणा उनके काव्य में प्राणवान है वही करुणा गद्य साहित्य का उत्स है। सहज मानवीय और संवेदनशील कवयित्री होने के कारण लेखिका रूप में इनके गद्य में भी वही मानवता और संवेदना अनवरत प्रवाहित होती रही है। महादेवी जी ने जिस प्रकार काव्य–क्षेत्र में अपनी विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया है, उसी प्रकार निबंध के क्षेत्र में भी मौलिक चिंतन एवं मनन के सहारे अपने अद्भुत ज्ञान, अनुपम दृष्टिकोण, विशिष्ट जीवन–दर्शन, विलक्षण बुद्धि एवं अप्रतिम विश्लेषण–पद्धति से हमें अवगत कराया है। महानता की चुनौती देने, वेदना, करुणा और दुख को आत्मसात करने, नारी–मन का कोना–कोना पढ़ लेने, समाज के प्रत्येक पक्ष को, जीवन की प्रत्येक गहराई को तीक्ष्ण दृष्टि से देखनेवालों में महादेवी वर्मा के समान कोई निबंधकार नहीं है।

निबंध विधा के बारे में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए महादेवी जी कहती हैं– "ग्रंथ शब्द के समान निबंध भी अपने मूल अर्थ को खोकर रूढ़ हो गया है इसका शाब्दिक अर्थ तो नि+बंध+धंम् प्रत्यय ही है, जिसका अर्थ बांधना है, किंतु अब वह साहित्य की एक इतनी महत्वपूर्ण विधा के अर्थ में प्रयुक्त होता है जो कविता का भी निष्कर्ष या कसौटी कहा जाता है अपने निबंधों के संबंध में क्या कहूं उनके संबंध में तो दूसरे ही बता सकते हैं। कविता लिखने से गद्य लिखना अवश्य ही कठिन रहा होगा, अन्यथा "गद्य कविनाम् निकषं वदंति", ना कहा जाता।"

महादेवी जी के निबंधों में जगह–जगह हमें भारतीय संस्कृति के बिखरे चित्र देखने को मिलते हैं। हालांकि उन्होंने इसको अपनी लेखनी के माध्यम से समेटने का सफल प्रयास किया है। देवी जी ने आधुनिक समय में अपने राष्ट्र के गौरवशाली अतीत को याद किया है व देश के भविष्य यानी युवाओं से आह्वान किया है, कि उस अतीत में सब कुछ हेय मानकर छोड़ देने वाला नहीं है और सभी कुछ पुराना आभूषण मानकर गले से लगाने लायक भी नहीं है। वे कहती हैं कि एक समन्वयकारी दृष्टि से हमें इसका उपयोग एक भव्य भविष्य गढ़ने में करना चाहिए। उनके भारतीय संस्कृति से संबंधित निबंधों को 'भारतीय संस्कृति के स्वर' पुस्तक में संग्रहीत किया गया है। यहाँ इसी संग्रह के निबंधों पर विचार प्रस्तुत किया गया है।

इस संग्रह में संकलित निबंध 'मातृभूमि देवो भवः' हमारी भारतीय संस्कृति को आलोकित एवं युवा संस्कृति को प्रेरित करने वाला निबंध है। इस निबंध में महादेवी का आस्थापरक और कोई प्रेरणादायी रूप प्रकट हुआ है। भाषण शैली में लिखित इस निबंध में मातृभूमि के प्रति उनकी गहरी आस्था और विश्वास को अभिव्यक्ति मिली है। शिक्षा और विद्या का सूक्ष्म अंतर बतलाते हुए महादेवी जी ने भारतीय भूमि की प्राचीन उज्ज्वल परंपराओं की ओर युवाओं का ध्यान आकर्षित किया है। उन्होंने आत्मशक्ति के लिए नियमित एवं संयमित जीवन पर बल दिया है। भारत की महान संस्कृति और जीवन मूल्यों को सुरक्षित रखने के लिए महादेवी जी ने मातृभूमि को देवता तुल्य समझने का संदेश दिया है। महादेवी जी ने बड़े सरल–स्पष्ट रूप से संस्कृति और वैज्ञानिक संस्कृत में अंतर किया है। संस्कृति व्यक्ति के अंतस को, उसके अंतर–हृदय को समृद्ध बनाती है, जबकि वैज्ञानिक संस्कृति व्यक्ति के बाहरी जीवन स्तर को ऊंचा उठाती है। वैज्ञानिक संस्कृति का विकास करके भौतिक अभाव तो भर जाते हैं, किंतु हृदय खोखला रहता है। संस्कृति हमारे आंतरिक अभावों को भरती है, हमारे मन को तेजस्वी बनाती है। आज का कर्म क्षेत्र कठिन है, समाज विभाजित है, धर्म अंधविश्वास से ग्रसित है, राजनीति स्वार्थ में विभाजित है। हम केवल विभाजित ही विभाजित हैं। तब भी महादेवी जी निराश नहीं है। वे कहती हैं– "किसी युग का सबसे बड़ा वसंत उसका लावण्य है, उसकी नई पीढ़ी है। जब वह पराजित हो जाता है, सब कुछ व्यर्थ हो जाता है। यदि आप निराश हो, आप कहें कि समाज में हमारा स्थान नहीं है, राजनीति में हमारा कोई स्थान नहीं है, तो मैं आपको यही उत्तर दूंगी कि आप स्थान बनाइए"

वे कहती हैं– "हिमालय से निकली नदी शिलाओं से मार्ग नहीं मांगती, इसी प्रकार प्रत्येक पीढ़ी अपना मार्ग अपने आप बनाती है। लेकिन अपनी मर्यादा भी बनाती है, जो नदी समुद्र से हिमालय को जोड़ती है वह नदी मर्यादा भी बनाती है, वह नदी तट भी बनाती है, तट उसे बने बनाए नहीं मिलते।"

देवी जी पितृ देवो भव, अतिथि देवो भव के साथ 'मातृभूमि देवो भव' की कड़ी अपनी ओर से जोड़ देती हैं। उनका मानना है कि छात्र, देश और संस्कृति को सुरक्षित रखें ताकि कोई माने की यह भारतीय है इसके पास जीवन–मूल्य है। उनका कहना है कि विज्ञान प्रयोग में आ सके, यह मनुष्य के लिए बड़ी बात है। विज्ञान के पास अंधशक्ति है, वह निर्माण भी कर सकता है, ध्वंस भी। अणु से अस्त्र–शस्त्र बना लिए हैं। वही अणु जो भयंकर रोगों की चिकित्सा कर सकता है, संपूर्ण देश को नष्ट भी कर सकता है। तो आवश्यकता इस बात की है कि विज्ञान मनुष्य की सद्भावना से अनुशासित रहे। मनुष्य की शांति का प्रदर्शन ना बने। यह तभी हो सकता है जब हृदय और बुद्धि दोनों समन्वयवादी हो जाएं, मनुष्य सहृदय हो जाएं। तब विज्ञान की सारी शक्तियां आपको दिशा देंगी और कल्याण की ओर ले जाएंगी।

'संस्कृति का प्रश्न': निबंध में वास्तव में देवी जी ने संस्कृति के प्रश्न पर ही विचार किया है। वे भारतीय संस्कृति के आलोक में संस्कृति शब्द को परिभाषित करते हुए, उसे एकाकी और पूर्णता का दर्जा ना देते हुए विभिन्न रूपों की ऐसी समन्वयात्मक समष्टि कहतीं हैं, जिसमें एकरूप सत्य पूर्ण होकर भी अपनी सार्थकता के लिए दूसरे का सापेक्ष है। संस्कृति कोई पूर्ण निर्मित वस्तु है, इसको भ्रम या भ्रांति कहते हुए, वे इसको निरंतर निर्माण क्रम कहती हैं। संस्कृति भी निरंतर संस्कार क्रम है। संस्कृति के विषय में वे कहती हैं कि यह एक ऐसी नदी है जिसकी गति अनंत है। भारतीय संस्कृति के विषय में, वे इसकी चिर प्रवाहित मूल धारा का कारण इसकी समन्वयात्मक शक्ति को बताती हैं। भारतीय संस्कृति का प्रश्न अन्य संस्कृतियों से कुछ भिन्न है, क्योंकि वह अतीत की वैभवगाथा ही नहीं, वर्तमान की करुण गाथा भी है। जैसे संस्कृति विकास के विविध रूपों की समन्वयात्मक समष्टि है, वैसे ही भारतीय संस्कृति विविध संस्कृतियों की समन्वयात्मक समष्टि है। वे कहती हैं ष्भारतीय संस्कृति निश्चित पद से काट–छांटकर निकाली हुई नहर नहीं, वह तो अनेक स्रोतों को साथ ले अपना तट बनाती और पाट निश्चित करती हुई, बहने वाली स्रोतस्विनी है।"

'भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि': नामक निबंध में उन्होंने यह बताने की कोशिश की है, कि विदेशी शोधकर्ता पूर्वाग्रह के कारण इसे 3500 वर्ष दूर ही ले जा सके, जबकि बाइबिल के अनुसार सृष्टि की रचना 7500 वर्ष के लगभग है। इस आधार पर अगर देखा जाए तो लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने विदेशी शोधकर्ताओं की तमाम बातों को खारिज करके यह स्थापित किया है कि "ब्राह्मण ग्रंथ के निर्माण में कृतिका नक्षत्र प्रथम माना जाता है, उसी में दिन रात बराबर होते थे। आजकल सूर्य के अश्विनी नक्षत्र में रहने पर यह स्थिति होती है। इस परिवर्तन के लिए 4500 वर्षों का दीर्घ समय लगा होगा।"

कई बार हम पाश्चात्य विद्वानों की धारणाओं के आधार पर गलत धारणा बना लेते हैं, उनसे अनुरोध है कि उन लोगों को 'भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि' निबंध अवश्य पढ़ाना चाहिए। महादेवी जी ने बड़ी मेहनत के बाद तमाम दृष्टांतों के आधार पर पाश्चात्य शोधकर्ताओं के निष्कर्षों पर पानी फेर दिया, और यह बताने की कोशिश की है कि " काव्य में जो तत्व सौंदर्य की सीमा में बंध गया है वही दर्शन में सत्य के रूप में मुक्त हो सका है और पुनः वह नैतिक धरातल पर शिव की परिभाषा में अवतरित हुआ। भारतीय संस्कृति विविधतामयी है। क्योंकि भारत की प्रकृति आनंदरूपा है, वह समन्वयवादिनी है क्योंकि सबको स्वीकृति देती है। किसी एक विचार, एक भावना, और धारणा की सीमा उसके लिए बंधन है, क्योंकि वह असंख्य नदियों, स्रोतों को अपनी में मुक्ति देने वाला समुद्र है।"

इस निबंध में भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि को महादेवी जी ने हिमालय, नदियों, वनों, पशु–पक्षियों, गाय, पेड़ों, उषा, वरुण देव, महादेव, रौद्रता, उग्रता, शिवत्व, मारुत, जिज्ञासा व अन्वेषण के माध्यम से परिचित कराया है। देवी जी भारतीय दर्शन की मूल बात 'सर्वप्रथम इच्छा से बीज की उत्पत्ति' मानते हुए, ऋषियों द्वारा चेतना से ही सृष्टि का उद्गम मानने में सहमत हैं।

'मानव विकास : परंपरा के संदर्भ में': निबंध के अंतर्गत लेखिका ने परंपरा एवं क्रमबद्धता के उस स्वरूप का विवेचन किया है, जिसका एक छोर अतीत है, और दूसरा अलक्ष्य भविष्य। परंपरा के निर्माण में युगों का समय लगता है। इसका विकास–क्रम बड़ा जटिल है। व्यक्ति की आस्था अनेक आवर्त्तन–संवर्त्तन के बाद रूढ़िग्रस्त होती है। यह स्थिति के अनुसार घटित होता है। लेखिका के मातानुसार युग–युगांतर की मूल्यात्मक उपलब्धियां अपने अखंड प्रवाह के कारण परंपरा बन जाती हैं। व्यक्ति ही इनका सचेतन संग्राहक एवं प्रबुद्ध प्रवाहक है। परंपरा विकास–ह्रास का इतिवृत्त मात्रा नहीं, बल्कि एक चिंतनपूर्ण जीवन–दृष्टि है। यह रगात्मक विस्तार की संयोजिका है, जो जीवन को ऊर्ध्वतर बनाती है। परंपरा हृदय की स्वीकृति है। वह एक स्मृति संस्कार है, जिसका जीवन से अविच्छिन्न संबंध है। यह एक शाश्वत जीवन–मूल्य है; जबकि प्रयोग सत्य का युग सीमित अंश मात्र है। लेखिका ने प्रयोग एवं परंपरा के विचारक्रम में उनकी इतिहास तथा विज्ञान से तुलना की है। महादेवी जी ने आधुनिकता को परंपरा–प्रतिगामी नहीं माना है। उनके शब्दों में "परंपरा ही अनुभूति में गतिशील रहती है।" लेखिका के यह निष्कर्ष बड़े संतुलित और परिप्रौढ़ हैं।

इसी प्रकार महादेवी जी अपने अगले निबंध 'संस्कृति और प्राकृतिक परिवेश' में बताती हैं कि संस्कृति हमारे प्राकृतिक परिवेश की ही देन है। मानव प्राकृतिक परिवेश के भीतर एक सांस्कृतिक परिवेश की रचना करता है, और उसमें पीढ़ी दर पीढ़ी बदलाव और विकास की प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है। वे बताती हैं कि विकास की दृष्टि से इस परिवेश की गति स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर रही है, और विशालकाय से लघुता की ओर। वे संपूर्ण मानव–जीवन को जड़ और चेतना का स्थाई संधि–पत्र कहती हैं, जिसमें पार्थिवता से वलयित चेतन ही को विशेषाधिकार प्राप्त है। वे चेतन को जड़ता से अधिक महत्व देती हैं वे कहती हैं– "चेतन से रहित शरीर चाहे मिट्टी, परंतु उसमें विकासोन्मुख गति संभव नहीं रहेगी।" इसी निबंध में आगे वे कहती हैं कि संस्कृति शब्द से हमें जिसका बोध होता है, वह ऐसी जीवन पद्धति है जो एक विशेष प्राकृतिक परिवेश में मानव निर्मित परिवेश संभव कर देती है, और फिर दोनों परिवेशों की संगति में निरंतर स्वयं पनपती–मिटती हुई निरंतर चलती रहती है। वे सभ्यता और संस्कृति को पर्याय नहीं मानती हैं। सभ्यता मात्र भद्राचार या सभा के उपयुक्त आचार ही को व्यक्त करती है। मुख्यतः इसका क्षेत्र मनुष्य का बाह्य आचरण ही रहा है, जबकि संस्कृति शब्द इससे भिन्न अधिक आध्यात्मिक है। वे एक राष्ट्र को व्यक्तित्व संपन्न मानती हैं। व्यक्ति के समान ही देश का, राष्ट्र का भी व्यक्तित्व होता है। समय के साथ–साथ एक विशेष प्राकृतिक परिवेश में विकसित मानव–समूह अपने संपूर्ण प्रवेश–गत जीवन को एक देश या राष्ट्र का व्यक्तित्व देकर, सामान्य मानव जाति के भीतर एक उपजाति बन जाता है। वे कहती हैं जीवन के इसी परिष्कार–क्रम में मनुष्य की जो महत्वपूर्ण उपलब्धियां होती हैं वे बाद में स्थूल नामों से पहचानी जाती हैं जैसे धर्म, कला, शासन, नीति, आचार–शास्त्र आदि, परंतु अलग–अलग जान पढ़ने वाली यह उपलब्धियां एक ही संस्कृति शरीर का अवयव होने के कारण मूलतः एक ही कही जाएगी। सब की समग्रता भारतीय संस्कृति की संज्ञा में निहित है।

'भारतीय संस्कृति और शासन निबंध': में यह विचार प्रस्तुत किए गए हैं, कि कैसे विदेशी शासन ने सिर्फ राजनीतिक ही नहीं अपितु सांस्कृतिक अधिकार भी, भारतीय भूमि और जनमानस पर पाना चाहा, जिससे हमारी विकासशील सांस्कृतिक परंपरा न केवल अवरुद्ध हुई, बल्कि क्षीण भी हुई। देवी जी अपने निबंधों में बार–बार यह संकेत करती हैं कि सिर्फ राजनीतिक स्वतंत्रता मिल जाने से हमारा विकास नहीं होगा, समस्या की मूल है मानसिकता। वे कहती हैं कि हमारी मानसिक दासता अब तक दूर नहीं हो सकी है और जब तक हम मानसिक दासता को दूर नहीं करेंगे हम विकास के नए स्वप्न और आदर्श नहीं गढ़ सकते। वे इन स्वप्नों और आदर्शों को जनमानस में फैलाने के लिए साहित्यकार, कलाकार, विद्वान और चिंतकों की जिम्मेदारी मानती हैं। उनका मानना है, जीवन को नए स्वप्न और आदर्श तो इस देश के साहित्यकार, कलाकार, विद्वान और चिंतक ही दे सकते हैं। उनके निबंधों में बार–बार दिखता है कि शासन जिस प्रकार साहित्यकारों और कलाकारों को उपेक्षित करता है, यह एक गंभीर समस्या है। देवी जी की यह सामाजिक टीस उनके निबंधों में बार–बार दिखती है। देश के लिए साहित्यकार का होना कितना मूल्यवान है इसके लिए वे लिखती हैं "हमारा देश निराशा के गहन अंधकार में साधक साहित्यकारों से ही आलोक दान पता रहा है जब तलवारों का पानी उतर गया, शंखों का घोष विलीन हो गया, तब भी तुलसी के कमंडल का पानी नहीं सूखा और सूर के एकतारे का स्वर नहीं खोया। आज भी जो समाज हमारे सामने है वह तुलसीदास का निर्माण है। हम पौराणिक राम को नहीं जानते तुलसीदास के राम को जानते हैं। " वे शिक्षा व्यवस्था और विद्यालयों, गुरुओं की स्थिति पर प्रकाश डालती हुई कहती हैं – "हमारी शिक्षा चाहे वह प्राथमिक हो चाहे उच्च उसने मनुष्य की संभावनाओं की ओर कभी ध्यान नहीं दिया। वह तो केवल नौकरी दिलाने के लिए प्रमाण पत्र देती हैं और उसे भी नहीं दिला पाती" वे शासन को सुझाव देती हुई लिखती हैं कि "यदि आज के विषम जीवन में हम नई पीढ़ी की एकता बनाए रखना चाहते हैं तो हमें शिक्षा में साहित्य और संस्कृति को ऐसा महत्वपूर्ण स्थान देना होगा, जिसमें विद्यार्थी को मानव एकता और विश्व बंधुत्व का संदेश प्राप्त हो सके और वह अधिक पूर्ण मनुष्य बन सके। इसके साथ–साथ हमें अपनी नवीन पीढ़ी के विधाता साहित्यकारों तथा शिक्षकों को भी उपेक्षणीय स्थिति से मुक्त करना होगा।"

महादेवी वर्मा अपने निबंध 'शिक्षा का उद्देश्य' में शिक्षा को व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के निर्माण का सबसे महत्वपूर्ण माध्यम मानती हैं। इस निबंध में विशेष रूप से भारतीय शिक्षा परंपरा, विद्या का उद्देश्य, परा एवं अपरा विद्या, स्वतंत्रता के बाद की शिक्षा व्यवस्था, विद्यार्थी असंतोष, मातृभाषा और शिक्षा में हिन्दी की भूमिका को ध्यान में रखकर वे बात करती हैं। उनके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य केवल पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करना अथवा आजीविका अर्जित करने की योग्यता विकसित करना नहीं है, बल्कि व्यक्ति के हृदय, बुद्धि, विचार और व्यवहार का परिष्कार करना है। भारतीय शिक्षा परंपरा में विद्या को मुक्ति का साधन माना गया है। शिक्षा व्यक्ति को अपनी सांस्कृतिक विरासत, जीवन–मूल्यों और सामाजिक उत्तरदायित्वों से जोड़ते हुए उसमें नैतिकता, संवेदनशीलता, आत्मबोध तथा स्वतंत्र चिंतन की क्षमता विकसित करती है। लेखिका का मानना है कि किसी भी राष्ट्र की संस्कृति और उसकी भावी प्रगति का आधार उसकी शिक्षा व्यवस्था होती है। इसलिए शिक्षा में अतीत की उपलब्धियों और वर्तमान की आवश्यकताओं का समन्वय होना चाहिए, ताकि भविष्य का निर्माण अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़कर किया जा सके। लेखिका तत्कालीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था की समस्याओं, विशेषकर विद्यार्थियों में बढ़ते असंतोष, बेरोजगारी, शिक्षा के उद्देश्यहीन स्वरूप तथा विदेशी भाषा के माध्यम से शिक्षा दिए जाने पर चिंता व्यक्त करती हैं। उनके अनुसार शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए, क्योंकि भाषा व्यक्ति की संस्कृति, संवेदना और राष्ट्रीय पहचान से गहराई से जुड़ी होती है। वे हिन्दी को भारत की सांस्कृतिक एकता का महत्वपूर्ण माध्यम मानते हुए अन्य प्रादेशिक भाषाओं के सम्मान और संरक्षण पर भी बल देती हैं। लेखिका का विचार है कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो व्यक्ति की अंतर्निहित प्रतिभा और सृजनात्मक क्षमताओं का विकास करे तथा उसे

समाज और राष्ट्र के प्रति जागरूक एवं उत्तरदायी बनाए। इस प्रकार महादेवी वर्मा शिक्षा को केवल जीवनयापन की तैयारी नहीं, बल्कि जीवन को सार्थक, स्वतंत्र, नैतिक और मानवीय बनाने की प्रक्रिया मानती हैं।

'भाषा का प्रश्न': निबंध में वह भाषा पर विचार करती हुई कहती हैं कि मनुष्य की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति में सबसे अधिक समर्थ अक्षर और भाषा ही होती है। वही मानव के आंतरिक तथा बाह्य जीवन के परिष्कार का आधार है। क्योंकि बौद्धिक क्रिया, मनोरोगों की अभिव्यक्ति तथा उनके परस्पर संबंधों को संगठित करने में भाषा एक स्निग्ध किंतु अटूट सूत्र का कार्य करती है। भाषा में स्वर, अर्थ, रूप, भाव तथा बोध का ऐसा समन्वय रहता है, जो मानवीय अभिव्यक्ति को व्यष्टि से समष्टि तक विस्तार देने में समर्थ है।

वे वाणी को आत्मा की मौलिक अभिव्यक्ति कहती हैं। जिस प्रकार बाह्य परिवेश से मानवीय व्यक्तित्व प्रभावित होता है, इसी प्रकार भाषा भी परिवेश और अपनी धरती से ही प्रभाव ग्रहण करती है। भाषा को समझाते हुए वे इसे त्रिवेणी कहती हैं– " प्रत्येक भाषा ऐसी त्रिवेणी है, जिसकी एक धारा व्यवहारिक जीवन के आदान–प्रदान सहज करती है, दूसरी मानव के बुद्धि और हृदय की समृद्धि को अन्य मानवों के बुद्धि तथा हृदय के लिए संप्रेषणशील बनाती है और तीसरी अतःसलिला के समान किसी भेदातीत स्थिति की संयोजिका है।"

निष्कर्ष

महादेवी वर्मा के इन निबंधों में भारतीय परिवेश पूर्णतः घुला–मिला हुआ है। यह सिर्फ एक भारतीय नारी के लेखन में ही संभव हो सकता था। निस्संदेह वे विदुषी थीं। उन्होंने भारतीय–जन को, आने वाली पीढ़ियों को भारतीय–सांस्कृतिक जीवन से परिचित कराने के लिए पीछे मुड़कर देखा और हमारे गौरवमयी सांस्कृतिक–इतिहास को अपनी वैचारिक पृष्टभूमि पर कसा तथा इस भारतबोध को सबके सामने प्रस्तुत कर दिया। महादेवी जी के काव्य में जो वैयक्तिक वाणी है, वह यहाँ समष्टिगत हो गई है, उनके काव्य–गीतों की कोमल पदावली यहाँ वैचारिक–दार्शनिक शब्दावली से स्थापित हो गई है, काव्य में वे जितनी अंतर्मुखी–रहस्यात्मक अभिव्यक्ति करती हैं वहीं गद्य में पूर्ण रूप में बहिर्मुखी–बहुआयामी हो गई है। 'निबंध गद्य की कसौटी है' इस वाक्य को महादेवी सफलता से चरितार्थ करतीं हैं। सूर्यप्रसाद दीक्षित अपने लेख 'गद्य गरिमा' में महादेवी जी के गद्य को आत्मरक्षा का साधन कहते हुए इसके विषय में लिखते हैं– "वह विशुद्ध आत्मचिंतन और स्वस्थ युग–दर्शन है। प्राचीन शास्त्र, वैज्ञानिक सभ्यता, और उपयोगितावाद का यह नया समझौता है जिसे भारतीय संस्कृति के परिपार्श्व में रखकर परखा गया है।" निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि महादेवी जी के गद्य में 'भारतीय संस्कृति के स्वर' मूल रूप में विद्यमान हैं।

संदर्भ सूची

1. शुक्ल, रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास
2. मिश्र, डॉ. विभुराम, प्रतिनिधि हिन्दी निबंधकार, पृष्ठ–185
3. वर्मा, महादेवी, भारतीय संस्कृति के स्वर, (दो शब्द) भूमिका से
4. वर्मा, महादेवी, (मातृभूमि देवो भवः) भारतीय संस्कृति के स्वर, पृष्ठ–9
5. वही ...
6. वर्मा, महादेवी, (संस्कृति का प्रश्न) भारतीय संस्कृति के स्वर, पृष्ठ–21
7. वर्मा, महादेवी, (भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि) भारतीय संस्कृति के स्वर, पृष्ट–25
8. वर्मा, महादेवी, (भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि) भारतीय संस्कृति के स्वर, पृष्ठ–38
9. वर्मा, महादेवी, (मानव विकास: परंपरा के संदर्भ में) संकल्पिता, पृष्ट–16
10. वर्मा, महादेवी, (संस्कृति और प्राकृतिक परिवेश) भारतीय संस्कृति के स्वर, पृष्ठ–45
11. वर्मा, महादेवी, (भारतीय संस्कृति और शासन निबंध) भारतीय संस्कृति के स्वर, पृष्ठ–53
12. वर्मा, महादेवी, (भारतीय संस्कृति और शासन निबंध) भारतीय संस्कृति के स्वर, पृष्ठ–55
13. वर्मा, महादेवी, (भारतीय संस्कृति और शासन निबंध) भारतीय संस्कृति के स्वर, पृष्ठ–56
14. वर्मा, महादेवी, (भाषा का प्रश्न) भारतीय संस्कृति के स्वर, पृष्ठ–59
15. दीक्षित, सूर्यप्रसाद, (गद्य गरिमा) महादेवी का गद्य, पृष्ठ–125